संपादक की कलम से.....

रामअवतार बैरवा

पुरानी सोच : नयी ख़ोज

इस लोक में सबसे धीमी चाल समय की है और सबसे तेज चाल भी समय की ही है। इंसान को जब देरी हो रही होती है तब यह बहुत तेज भाग रहा होता है और जब इंसान कहीं बहुत पहले पहुंच जाता है तब यह बहुत धीरे-धीरे चलता है। इस सदी के पच्चीस बरस न जाने कब निकल गए, पता ही नहीं चला। इंसान इस चौथाई में बहुत उतावला रहा है। बहुत कम में बहुत कुछ पा लेने की चाह में उसके पास जो था, वह भी कहीं खो गया है। सबसे ज्यादा फर्क उस पीढ़ी पर पड़ा है, जो इस सदी की दहलीज पर पन्द्रह से बीस साल की थी। बहुराष्ट्रीय कंपनियों और भूमंडलीकरण की प्रक्रिया ने उसे विज्ञान और तकनीक के तो बहुत करीब ला दिया पर अपनी परम्पराओं, संस्कारों, जीवन मूल्यों और धैर्य से बहुत दूर कर दिया। ये पीढ़ी अब मेहनत से जी चुराने लगी है। अब गांवों तक में चूल्हे पर रोटी नहीं बनती है। हाथ की चक्की से आटा भी कोई नहीं पीसता है। शादियों या अन्य समारोहों में खाना घर पर नहीं बनता, सब बाजार की गिरफ्त में है। खेती की अधिकांश जमीन पथरीले जंगल में तब्दील हो गई है। कहीं-कहीं पानी पांच सौ से हज़ार फिट तक जमीन में चला गया है। साहित्य पर तो तत्काल बहुत अधिक खतरा आ टिका है। अब इंसान को कुछ लिखने की जरूरत नहीं है। आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस सब कुछ लिखा-लिखाया दे रहा है। व्यक्ति एक दिन में पूरी किताब लिख सकता है। हालांकि आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस (एआई) खुद कुछ भी नहीं लिखता है, इंटरनेट पर जो सामग्री उपलब्ध है, उसी को जोड़-तोड़ कर सामने ला देता है। मौलिकता पर बड़ा प्रश्न चिन्ह लग गया है। पत्र-पत्रिकाएं लगभग खत्म-सी हैं, जो शेष हैं उनमें संवाददाता और रिपोर्टर्स की जरूरत नहीं रह गई है। हम चाहकर भी कुछ नहीं कर पा रहे हैं। अब अच्छे लेखक की पहचान मीडिया द्वारा तय होती है। बड़े लेखकों को मजबूरन अपनी रचनाओं को जनता तक पहुंचाने के लिए सोशल मीडिया का सहारा लेना पड़ रहा है। वहां से एआई रचनाओं को जोड़-तोड़ करके दूसरे को दे रहा है। स्थापित रचनाकारों के लिए अधिक संकट नहीं पर अपना मौलिक और अच्छा लिखने वाली नयी पीढ़ी कहां जाए ? पाठक की अभिरुचि, समझ और स्थिति भी लगभग बदल गई है। अब वह प्यार-मुहब्बत, जुदाई-बिछुड़न, कथ्य-शिल्प नहीं चाहती , नया, बिल्कुल नया कुछ चाहती है। फिल्म धुरंधर का एक गीत किसी को समझ नहीं आ रहा पर लोग इसलिए पगलाए

हुए है कि उसमें नयापन है। अक्षय खन्ना फिल्म में विलन होते हुए भी सबके चेहते बन रहे हैं। उन्होंने अपना कला का बेहतरीन नमूना पेश भी किया है। इसीलिए लोग उनको नहीं, उनकी कला को सराह रहे हैं।

अब की पीढ़ी सारा निर्णय सोच-समझकर ले रही है। ये पीढ़ी इंटरनेट और सोशल मीडिया से निखरी और आगे बढ़ी है। अब हाथों में दुनिया के तमाम पुस्तकालय मौजूद हैं। बीते पच्चीस वर्ष में भले हम अपनी जड़ों से कटे हों पर बदलाव भी अकल्पनीय हुए हैं। नितान्त यथार्थ में जी रही इस पीढ़ी ने अगर परम्पराओं और प्रकृति को भी बचाए रखा होता तो कोई भी दुनिया इससे बेहतर नहीं होती। अभी भी ज्यादा कुछ नहीं बिगड़ा है। अपनी परम्पराओं को साथ लिए हम दशरथ मांझी का अगर एक प्रतिशत हिस्सा भी बन जाएं और बारिश में व्यर्थ बहकर समन्दर में जा रहे पानी को रोक सकें तो आने वाले दस वर्षों में हम से बेहतर कोई नहीं होगा।